नुष्य बनो

का०मू०
५-२५

शुभ संकल्प,

गति

प्रेम,

कर्म,

ब्रह्मचर्य पालन

फकीर चन्दजी महाराज

त्रता मन्दिर होशियारपु (पंजाब)

विषय सूची

अनु०	विषय	लेखक	पृष्ठ
१	हमारी बात	मेनेजर	२
२	मंगलाचरण	....	३
३	दातादयाल के अनमोल वचन	महर्षि जी	४
४	बैशाखी	फ़क़ीर साहब	६
५	दातादयाल की एक कहानी	महर्षि जी	९
६	कर्म भोग अथवा मौज	फ़क़ीर साहब	१२
७	लक्ष्य कर्म भोग अथवा मौज	,,	२२
८	होशियारपुर का मासिक सत्संग	,,	२६
९	हंस और बगुला में क्या अन्तर है ?	,,	२८
१०	विचारों का प्रभाव	,,	३३
११	दातादयाल जी का पत्र नन्दूभाई जी को	,,	३४
१२	कर्मभोग अथवा मौज	,,	३५
१३	ग़ज़ल पीरेमुग़ां साहब	....	३९
१४	फेमीली प्लानिंग	,,	४०
१५	दातादयाल जी का एक शब्द	....	४१
१६	कर्म भोग अथवा मौज	,,	४३
१७	नन्दूभाई जी महाराज की साखी	....	४५
१८	शब्द स्वामी जी महाराज	....	४६
१९	बड़ों का विनोद		४६
20	What our thought power can do or undo		48
21	Review by the editor Vishwa dhwani		49

हमारी बात

हम अलीगढ़ आये, सन् छब्बीस में। १९२६
ख्याल का नक़शा, खिचा बत्तीस में॥ १९३२
ख्याल में ताक़त बड़ी श्रीमान जी।
अपनी आँखों देखली, छत्तीस में॥ १९३६

जैसा ख्याल वैसा हाल। हम अपने एक छोटे से ग्राम सोफ़ा नगलिया से जो अब दयाल नगर कहलाता है अलीगढ़ में १९२६ में आये थे। बड़े भाग्य से संयोगवश दातादयाल जी के दर्शन हुये। अपनी शरण में लिया। सादा जीवन उच्च विचार प्रदान किये। संकल्प शक्ति का चमत्कार दिखाया। जैसा ख्याल किया वैसा बनाया। खूब खेल खिलाया। पर कुछ समझ में न आया। १९४२ में परम दयाल जी के दर्शन हुये। दातादयाल ने मेल मिलाया। जिन्होंने यह काम बताया। गूढ़ रहस्यों को समझाया गले लगाया उकसाया। शंका भ्रम दूर किये। हम से वह वह काम लिये ऐसे ऐसे उपदेश दिये। जिन्हें आप महानुभाव इस पत्रिका में ८ आठ वर्ष से बराबर अध्ययन करते चले आरहे हैं। अब जाकर उस बात की कुछ कुछ समझ आई है जो दातादयाल ने बताई थी। वह क्या थी?

ज़िन्दगी सादा रहे, ऊँचे रहें तेरे ख्याल।
जल्द हासिल होगा तुझको, आप इन्सानी कमाल॥
सादा जीवन उच्च विचार। हो जायें तो बेड़ा पार॥

चूँकि उच्च विचारों का चमत्कार अपनी आँखों से देख लिया है। इसलिये हम प्रति मास अपनी तथा हमारी बात के शीर्षक से ऐसा कहते रहते हैं कि यह संसार संकल्प मय है। मनोमय जगत है। जैसा जैसा हम विचार करते रहते हैं, वैसा वैसा होता रहता

(शेष पृष्ठ ५० पर)

R. S

मनुष्य बनो

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदंपूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

वर्ष ८ | मई १९६० वैशाख २०१७ वैक्रम | सं० ८/९२

* मङ्गलाचरण *

भक्ति दाता भक्ति दीजे, भक्ति पालन हार ।
मुक्त कीजे, भक्ति अपनी दीजिये करतार ॥
तुम हो ज्ञानी, तुम हो ज्ञाता, ज्ञान गम भंडार ।
मेट दो अज्ञान तम को, ज्ञान के आधार ॥
दीन तारन, दीन बंधू, दीन हीन दयाल ।
दीन शरण गत पड़ो है, कीजे उसकी संभाल ॥
मैं पतित सब बिधि हूँ स्वामी, तुम हो पतित उधार ।
मेरी ओर न देखियेगा, अपनी ओर निहार ॥
राधास्वामी, राधास्वामी, नाम दीजे दान ।
मान की इच्छा नहिं मोहै, आया तज अभिमान ॥
मैं हूँ बालक तुम पिता हो, मैं निपट अज्ञान ।
बाल बिनती सुनिये चित्त से, कीजे मेरा ध्यान ॥
भक्ति सेवा नहिं बने कुछ, मैं हूँ बाल स्वरूप ।
राधास्वामी मैं हूँ घट सम, तुम हो ब्रह्म के कूप ॥
मैं हूँ कंवल दल भानु सम, तुम कीजिये परकाश ।
चित रहे चरणों में निस दिन, दीजे ऐसी उजास ॥
फेर कर दृष्टी को मेरी, कीजे अपनी ओर ।
चन्द्र मुख तुम राधास्वामी, मैं हूँ चित्त चकोर ॥

दासादयाल जी के अनमोल बचन (दृढ़ता)

(१) हज़रत मसीह सलेब पर चढ़ाये गये। लकड़ी का क्रौस (+) बनाकर शत्रुओं ने उन्हें कीलों से जड़ दिया था। मनसूर को फाँसी दी गई। शम्श की खाल खींची गई। कबीर साहब को अनेक प्रकार के दुख दिये गये। स्वामी दयानन्द जी पर ढेले बरसाये गये। विष दिया गया। गुरु अर्जुन देव को पानी में डुबाया गया। गुरु हरगोबिन्द जी चौदह वर्ष तक कारागार में रहे। गुरु तेग़बहादुर जी का सर काटा गया। गुरु गोबिन्दसिंह जी ने नाना प्रकार के कष्ट और दुख सहे और अन्त में धर्म की वेदी पर प्राण दे दिये। उनके दो पुत्र जो ग्यारह (११) और सात (७) वर्ष के थे जीते जी दीवारों में चिन दिए गए। राधास्वामी मत की वह निन्दा की गई जिसकी कि कोई सीमा नहीं। महात्मा गाँधी को गोली से मारा गया। इन सबको कम नहीं सताया गया परन्तु यह सब अपने धर्म पर दृढ़ता के साथ डटे रहे। संसार आज तक भी आदर मान के साथ उनका नाम लेता है। बधाइयाँ देता है।

(२) गुरु नानक साहब के विषय में कहा जाता है कि जब वह पंजा साहिब में पहुँचे, एक फ़क़ीर ने तङ्ग करने के विचार से उनको पानी पीने को नहीं दिया और उन पर ऊपर से पत्थर का चट्टान लुढ़का दिया। वह अपने स्थान पर बैठे रहे। केवल उसकी ओर अपना पंजा लगा दिया। वह रुक गया और पंजा लगाने से उसी पंजा के स्थान से आप ही आप पानी की एक धार उत्पन्न हुई। पहाड़ पर नाम के लिए भी कहीं पानी नहीं रहा। समस्त पानी सूख कर उसी स्थान से निकलने लगा। सिक्ख भ्राता प्रति वर्ष वहाँ दर्शन करने जाते हैं। मालिक जाने इसमें कहां तक सचाई है परन्तु इससे कम से कम दृढ़ता, शान्त

स्वभाव और निश्चलता का बहुत ही उत्तम और सुन्दर उपदेश मिलता है ।

(३) नदी में प्राणी मल मूत्र करते और नहाते हैं। वह किसी की निन्दा नहीं करती। इसी प्रकार शान्त चित्त और भले मानुष निन्दा और बुराई को परवाह न करते हुए नियम बद्ध होकर कार्य करते रहते हैं।

(४) भले मानुषों पर इस संसार में लाखों आपत्तियाँ आईं, सर काटे गए, सूली चढ़ाए गए, खाल खींचीं गईं, गोली से मारे गए परन्तु श्वांस तक नहीं मारे। अन्त समय तक अपने धर्म पर डटे रहे। आज वही संसार है जो उनके पवित्र नाम को बड़े आदर और सम्मान के साथ स्मरण करता है।

(५) सर्व प्रथम धर्म और उसकी वास्तविकता को समझ लो। जब भली प्रकार निश्चय हो जाये कि यह सच्चा है और बुद्धि विवेक और सच्चाई की कसौटी पर कसे जाने से सच्चा और खरा सिद्ध होता है तब उसे दृढ़ता के साथ ग्रहण करो। फिर, तुमको कोई कितना ही डराये, धमकाये, झिड़काये, भड़काये, ललचाये और फाँसी पर भी चढ़ाये तब भी उससे न मुड़ो। तब तुम भलमनसाहत के साथ सफलता प्राप्त कर लोगे। यही नियम लोक और परलोक दोनों के लिए है। इसे समझ लो और तुम्हारा काम बन जायगा। तब मृत्यु का भय भी तुम्हारे मन को हिला न सकेगा।

गो नहीं ज़िन्दा हूँ पर जिन्दा है शुहरत मेरी।
बाद मरने के नहीं, मरने की इज्जत मेरी॥
मैंने वह कार नुमांयां, किये इस आलम में।
याद जिनकी कि दिलायेगी, यह तुरबत मेरी॥

बैशाखी

(ले० परमदय ल फ़क़ीर साहब)

नवीन वर्ष आया। आज बैशाखी दिवस है समस्त रात्रि अपने आपकी प्रत्येक अङ्ग से परीक्षा करता हुआ उस परमतत्व, अविनाशी, दातादयाल, सर्वाधार की खोज के क्रम में जो मुझको बालापन से मेरे कर्म भोग वश अथवा मौज आधीन चलता रहा।

अहा ! ढूँढ़ उसकी में में, खुद को ही खोता रहा।
तरजे इज़हार है, लोग कहें, मर खुद वह होता रहा॥
किसी ने कह दिया, कि वह इक बे अन्त है।
यह रचना सारी उसी की है एक करिशमा॥
वह आप ही आप है, क्या है ? मैं कह न सकूँ।
मेरे तो जीवन का अन्जाम, दोस्तो ऐसा ही हुआ॥

दातादयाल की भी वाणी है—

खोजत खोजत खो गया, पाया नहीं अन्त।
बिरथा निकली खोज, खोज से नहीं कुछ बनता॥

इसलिये—जब तक जीवन है भक्ति कर, ले उसका आसरा।

अक़्ल से गर कुछ कहो तो, है वह शब्द प्रकाश महा॥
सिवाय इसके कि उसकी आश रहे, और नहीं कोई आसरा।
जब तक है जीवन काम करो, लेकर के उसका आसरा॥
क्या दूँ सन्देश किसी को, मेरा तो यह अन्जाम हुआ।
कह डाला जो समझ में आया, क़िस्सा और तमाम हुआ॥
करम भोग बस चाहता हूँ बस एक बात।
सुखी रहे नर जब तलक है वह देह में पड़ा॥
बाद देह छूटे कहाँ जाऊँगा, केवल अनुमान है।
बाहिरा नर बुलबुला है, जन्मा और फिर मर गया॥

अहा ! संसार वालो ! यह इच्छा थी कि अपनी खोज का

परिणाम बता जाऊँगा। क्या बताऊँ ? चलता चलता बिसमाधि होकर स्वयं को भूल जाता हूं। किन्तु इस भूलने का अर्थ यह नहीं है कि मेरा अस्तित्व ही नहीं रहता। वरन् मेरे शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बोध भान नहीं रहते। किन्तु कुछ शेष अवश्य रहता है—

वह नेस्ती नहीं है हस्ती है, पर हस्ती का नहीं इज़्हार वहां।
बामकानियत ख़त्म हो जाती है,और रहती है लामकानियत वहाँ॥
मस्ती है, सरूर है, मगर वह मस्ती नहीं, जिस्म, मन, रूह की।
उस आनन्द का इज़्हार हो सकता नहीं है यहाँ॥

दातादयाल तथा अन्य महापुरुष कहते हैं कि जीव रूपी मीन उस अस्तित्व के समुद्र में अस्तित्व ही हो जाता है। सत्य है। इस विचार से मैं सहमत हूँ। किन्तु क्या उसमें कुछ शक्ति हो जाती है। यह समझ नहीं आई। अपने लिए ठीक है। इसलिए चेतन्ता में चाहता रहता हूं कि प्राणी मात्र को शान्ति मिले।

यदि मानव जाति में कुछ वर्षों में परिवर्तन आ जाय और हमारा जीवन शेष हो जाय तब तो यह सत्य होगा कि कोई मनुष्य वह हो सकता है वरन् मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ।

या तो बशर अपनी करनी आप भोगे और लहे सुख दुख यहां॥
या आप ही वह योग भक्ति करके आनन्द पाले फिर यहां।

या—

मौज उसकी के ज़ोर असर रह, खु.श रहे दिन रात।
काम करे संसार में नर, बेफ़िक्र, बेग़म रहे दिन रात॥

समस्त जीवन की दौड़ धूप के पश्चात् प्रत्येक अंग से चक्कर लगा कर देखा, अन्त में इस परिणाम पर आया कि यह आन्तरिक साधन और उसका आनन्द जन साधारण के लिए नहीं है। जन साधारण तो केवल इस जीवन को सुख

शान्ति से व्यतीत करना चाहते हैं। इसलिए चूँकि कर्म का नियम अटल है मैंने "मनुष्य बनो" को पुकार की है। दातादयाल जी ने मुझे आदेश दिया था कि फ़क़ीर चोला छोड़ने से पूर्व शिक्षा में परिवर्तन कर जाना। मैंने जो कुछ अनुभव किया उसके आधार पर कह चला कि जन साधारण का धर्म मानवता होना चाहिए। जब तक सदाचार और चरित्र ठीक न हो, जीवन के व्यतीत करने की युक्ति हाथ न आये अथवा जीवन साधन सम्पन्न न हो, इस शारीरिक और मानसिक जीवन में सुख शान्ति असम्भव है।

इसलिए देश के बुद्धिमान वर्ग को कहे जाता हूँ कि 'मनुष्य बनो' पूर्ण रूपेण मनुष्य बनो। सुरत शब्द से मन को मारो। और जतन कोई मत धारो॥ यह अध्यात्मक तथा आत्मिक अवस्था विशेष व्यक्तियों के लिए है और यह भी उस समय प्राप्त होगी जब मानव जीवन द्वेष, ईर्षा, घृणा, पक्षपात, काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहङ्कार आदि से स्वच्छ हो जाता है तब यह अवस्था आती है, इससे पूर्व नहीं। चूँकि मुझे इसका अनुभव है इसलिए ऐसा कहता हूँ।

नोट—मैंने राधास्वामी मत की शताब्दी जो १९६१ में होगी उसके लिए १० लेख श्री देवीचरन मीतल के पास भेजे हैं वह किसी समय प्रकाशित होंगे। यह मेरी भेंट है जो मैं संसार वालों को सच्चे हृदय से अर्पण करता हूँ। कब तक शरीर है मौज जाने। उसकी इच्छा। इस विचार से सभव है मेरा अनुभव त्रुटिपूर्ण हो मैं सच्चे हृदय से वर्तमान महात्माओं को तथा भविष्य में आने वाले महापुरुषों से कर बद्ध प्रार्थना करता हूं कि यदि उनका निज अनुभव जो पक्षपात से रहित है तथा निस्पक्षता के आधार पर है और वह मेरे विचारों को ग़लत

(शेष पृष्ठ १२ में पढ़ो)

दातादयाल की एक कहानी

एक दिन नारद मुनि विष्णु, भगवान के पास बैठे थे तब नारद मुनि ने वार्तालाप के मध्य भगवान से पूछा कि भगवान निर्गुण से सगुण कैसे होता है ? तब विष्णु भगवान ने नारद मुनि के कान में कुछ बात कहदी और नारद मुनि वहां से उठ कर चल दिये। इसे हम आपको इस कहानी से स्पष्ट किये देते हैं नीचे की कहानी इसी आशय पर प्रकाश डालती है।

एक पहाड़ी ग्राम में एक व्यक्ति अपनी स्त्री बच्चों सहित रहता था था और खेती वाड़ी से उनकी जीविका उपार्जन करता था। एक दिन यह व्यक्ति किसी अन्य ग्राम को अपनी एक नातेदारी में गया। लौटते समय रात्रि हो गई। अंधेरी रात और पाला पड़ रहा था। गङ्गा तट पर चला जा रहा था कि उसके पैर की ठोकर लगी। टटोल कर देखा तो एक व्यक्ति पड़ा था। अभी उसमें जान शेष थी। उसे दया आई और कन्धे पर रखकर उसको अपने घर पर ले आ [illegible] एक गर्म बिछौने पर सुला दिया। उसके निकट अग्नि [illegible] जिससे कि उसकी ठंड जाती रहे। चेत हुआ और आंख खोलीं तो गर्म दूध पिला दिया। इससे उसमें कुछ बल और शक्ति आई और वह पुकारने लगा तू सत है. तू सत है, तू सत है। उसमे उस किसान ने पूछा कि भाई तू कहां रहता है ? किन्तु उसने कुछ उत्तर नहीं दिया। चुप चाप सो गया। प्रातः होते ही घर के कार्यों में लग गया। किसान ने कहा अच्छा है कार्य में लगा रहने दो जब चाहेगा चला जायगा। किसान के बाल बच्चे उससे चाचा कहने लगे और वह बिना बोले चाले ही संकेत से कार्य करने लगा। कुछ दिवस पश्चात् इस किसान का भतीजा इसके घर आया। वह बोला कि चाचा मैंने पहाड़ी के ऊपर एक बड़ी सुन्दर भूमि देखी है। मेरा विचार

है कि उस पर एक ग्राम बसाऊँ। अभी तो केवल चौथाई लगान देना पड़ेगा और बारह वर्ष पश्चात् आधा। इससे अधिक बचत होगी। उससे दूसरा ग्राम बसाऊँगा। मैंने सोचा है कि इसी प्रकार पांच चार ग्राम बसा लूँगा और एक अच्छा निपुण ज़मींदार बन जाऊँगा। इतने हीं में एक वैरागी दुतारा बजाते हुए द्वार पर आया और गाने लगा:—

तू तो सोचे वर्षों की, यहाँ काल रहा मँडराय।
क्यों करता है मेरा तेरा, साथ कछू नहिं जाय॥

इतना सुनते ही उसके भतीजे को चेत हुआ और वह मूर्छा खाकर पृथ्वी पर गिर पड़ा और प्राण पखेरू हो गये। यह देखकर वह गूँगा बोल उठा—तू चित है, तू चित है, तू चित है।

किसान बोला भाई तू बोलता तो है फिर बताता क्यों नहीं कि तू कौन है? वह फिर चुपचाप अपने काम में लग गया।

दस पांच दिवस पश्चात् फिर एक दिन किसी पहाड़ी ग्राम से उसकी दूर के नाते की चाची आई। उसके साथ दो छोटे-छोटे बच्चे भी थे। यह देखकर उस किसान ने कहा कि तू तो विवाह पर ही बिधवा हो गई थी, यह बच्चे किसके हैं? उसकी चाची ने उत्तर दिया कि क्या बताऊँ एक वर्ष हुआ जब मैं तुम्हारे यहाँ से वापिस लौटी तो देखा कि गंगा तट पर एक स्त्री मरी पड़ी थी और यह दोनों बच्चे उसके ऊपर लोट रहे थे। यह देखकर मैंने उस स्त्री को तो गंगा में बहा दिया और इन दोनों को अपने साथ ले आई। अब यह दोनों मुझसे इतना प्रेम करते हैं कि तनिक देर को भी नहीं छोड़ते। इतना सुनकर वह गूंगा झट बोल उठा—तू आनन्द है, तू आनन्द है, तू आनन्द है। बच्चे पुकार उठे—चाचा बोला, चाचा बोला। किसान ने कहा कि तू कौन है बताता क्यों नहीं है?

इतना सुनकर वह व्यक्ति तुरन्त ही तेजवान और दिव्य रूप वाला हो गया। अब तो उसको देखकर स्त्री, किसान और बच्चे सब डर गये और हाथ जोड़ कर खड़े हो गये। तब वह व्यक्ति बोला कि भाई तुम डरो मत, मैं नारद मुनि हूं। मुझे यह शङ्का हो गई थी कि सच्चिदानन्द साकार रूप कैसे हो सकता है, तो भगवान् ने कहा था कि तुम उस किसान के घर चले जाओ वहाँ तुमको सच्चिदानन्द साकार रूप का दर्शन होगा।

सो भाई जब मुझ में तनिक भी सत नहीं था तो तुम मुझे अपनी सत्ता देकर यहाँ लाये और तुम मेरे लिए सत्त रूप भगवान् हुए और तुम्हारे भतीजे को उस वैरागी ने चेताया तो वह वैरागी उसके लिए चित रूप भगवान् हुआ और तुम्हारी चाची ने उन बच्चों का लालन पालन कर उन्हें आनन्द दिया तो उन बच्चों के लिए तुम्हारी चाची आनन्द रूप भगवान् हुई। इसलिए मैंने तेरे घर में ही सच्चिदानन्द साकार रूप के दर्शन किए। अब मैं जाता हूं और तुम्हें आशीर्वाद देता हूं कि तुम बाल बच्चों सहित प्रसन्न चित रहो। यह कह कर नारद मुनि अन्तरध्यान हो गए।

अब आपने समझा कि सच्चिदानन्द कोई अन्य नहीं है, मनुष्य ही साकार रूप भगवान् सच्चिदानन्द है। आप ही कर्ता और आप ही भोक्ता है। और जब इसको बहुत ठोकरें खाने के पश्चात् अपना ज्ञान हो जाता है अथवा समझ आ जाती है तो फिर वह शांत चित्त हो जाता, मन मगन हो जाता है। फिर न कुछ करता है न धरता है न भोगता है। किन्तु यह समझ आयेगी किसी पूर्ण पुरुष के सत्सङ्ग से।

पहिचान ले अपने को तो, इन्सान ख़ुदा है।
गो ज़ाहिर में है ख़ाक, मगर ख़ाक नहीं है॥

जलवों की खता क्या जो दिखाई नहीं देते।
खुद देखने वालों की नज़र पाक नहीं है॥

कर्म भोग अथवा मौज

(ले० परमदयाल जी महाराज)

मैंने अपना जीवन किसी वस्तु की खोज में बिताया है। मौज मुझे राधास्वामी मत में ले गई। वहाँ मुझे दातादयाल जी की पवित्र पुनीति तथा पूर्ण ज्ञान के अवतार की विभूति ने संस्कार दिया कि तू जिस वस्तु की खोज करता है वह चौथे पद और फिर पाँचवें पद में जाकर प्राप्त होगी।

चूंकि मुझमें बाल्य अवस्था से ही भक्ति और प्रेम का संस्कार विद्यमान था मैं समझता कि जितना अधीन हो कर सच्चे हृदय से प्रेम करूंगा दाता मुझको उतनी ही शीघ्र वह वस्तु दे देंगे। इसलिए मैं प्रेम और भक्ति की चरम सीमा पर पहुँच गया। दाता ने यह देखकर दिसम्बर सन् १९१८ में मुझे एक नारियल और पाँच पैसे देकर तिलक करते हुए कहा कि आज्ञा का पालन करो। "अधिकारियों को नाम दान दो और सतसंग कराया करो"। मैं चकित हुआ और प्रश्न किया कि दाता मैं तो कुछ जानता नहीं, किसी को क्या शिक्षा दूंगा। आपने कहा कि ऐ नादान फ़क़ीर! जो तू कहेगा वह सत्य होगा और साथ ही यह भी शिक्षाप्रद शब्दों में वर्णन किया कि बावले! यह न समझना कि तू किसी का बेड़ा पार करेगा वरन् तुझको सत्य पुरुष राधास्वामी दयाल के दर्शन सतसंगियों के रूप में होंगे और मौज ने जिस हेतु तुझे मेरे साथ लगाया है वह पूर्ण हो जावेगी।

(८ पृष्ठ का शेष)—

समझे तो खंडन कर सकते हैं। मैं नहीं चाहता कि संसार पथ भ्रष्ट हो। हाँ! यदि कोई महात्मा किसी निज स्वार्थ तथा

पक्षपात के अन्तर्गत खंडन करेगा तो वह अपनी आप जाने। जैसा करेगा वैसा भरेगा। (पृष्ठ ८ का शेष समाप्त)

मैं दातादयाल को पवित्र पुनीति विभूति के साथ ही उन सतसंगियों का जिन्होंने मेरे साथ प्रेम किया है, गुरू अथवा इष्ट माना है अति कृतज्ञ और आभारी हूं। मैं यदि वास्तव में चौथे और पाँचवे पद में रहने वाला हूं और यदि वहाँ रहने वाले में कोई बल शक्ति होती है तो मैं सच्चे हृदय से चाहता हूँ कि आप सज्जनों को सुख, शान्ति, प्रसन्नता, समृद्धता, बे फ़िक्री और स्वास्थ्य मिले और तुम भी मेरे समतुल्य इस रहस्य को समझकर आनन्द मय. निर्भय और निर्बैर हो जाओ।

अब मैं अपने कर्म भोग वश अथवा मौज आधीन अपने अनुभव के आधार पर कहता हूं कि मैंने किस प्रकार इस अवस्था को प्राप्त किया है जिसकी मुझको खोज थी और जो संतों के मार्गानुसार चौथा व पाँचवाँ पद कहलाता है। यद्यपि अभी पाँचवे पद में पूर्णतया बासा नहीं कर सका हूँ। और यदि यह स्थाई रूप में हो जाता तो संभव था कि यह लेख न लिख सक्ता।

ऐ भ्राताओ! आप सज्जनों के अनुभव ने मुझको इस काल और माया के चक्र से निकाल दिया। निकलने के उपरान्त वर्णन करता हूँ और वह भी स्वामी जी की वाणी के आधार पर।

कोई सुनो हमारी बात। कोई चलो हमारे साथ॥
क्यों सहो काल की घात। जम धर-धर मारे लात॥
तुम चढ़ो गगन की बाट। तो खुले अघर का पाट॥
घट बांधो दृढ़कर ठाठ। छुटे फिर यह औघट घाट॥

बात गूढ़ है किन्तु सत्य है यद्यपि सूक्ष्म होने के कारण प्रत्येक व्यक्ति कठिनता से समझ सकेगा।

मैंने पूर्णतया अनुभव कर लिया है कि जितने मानसिक प्रेम, भक्ति, ध्यान, योग इत्यादि हैं यह समस्त मनुष्य के अपने मन के खेल हैं। मुझको प्रारम्भिक अवस्था में इसका ज्ञान न था। ऋद्धि, सिद्धि, शक्ति समस्त मन के खेल सिद्ध हुए। इसका निश्चय आप सज्जनों ने करा दिया। क्योंकि मैं तो मृत्यु के समय किसी के भीतर प्रगट नहीं होता और न उसको कहीं ले जाता हूँ, न औषधि बतलाता हूँ, न संतान देता हूँ और न साधन में चढ़ाई कराता हूँ। ऐ संसार वालो ! विचार करो कि फिर वह कौन है ?

प्रगटा ज्ञान गुरू का औतार । कहता सबको हेला मार ॥
तुम भरम में फँस गए यार । भरम टूटे बिन न होंगे भव पार ॥

वह तुम्हारा अपना ही आत्मा है तुम्हारी अपनी ही सच्ची तड़प और इच्छा है जो तुम्हारी सहायता करती है। तुम्हारा अपना ही मन, तुम्हारे सांसारिक जीवन और मानसिक दशा का कर्ता पुरुष है।

जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी मती वैसी गती।
जैसी करनी वैसी भरनी, जैसी दृष्टी वैसी सृष्टी ॥

यह तुम्हारा ही मन तुम्हारे दुःख,सुख तथा आवागवन और अन्य बातों का उत्तरदाई है। यदि इस मन को किसी पूर्ण पुरुष के सतसंग से स्वच्छ और निर्मल कर लोगे तथा सच्चा संस्कार ले लोगे तो यही मन तुमको उच्च से उच्च कोटि तक पहुँचा देगा। इसी मन के कारण हमारी सुरत चक्र में फँसी रहती है और इस त्रिगुण आत्मिक जगत का सुख दुख भोगती रहती है।

यह तुम्हारा मन ही सच्चा मित्र और शत्रु है। इसलिये मैं वर्णन करता हूं—

कोई सुनो हमारी बात। कोई चलो हमारे साथ ॥ आदि आदि।

अभी इस डाक में एक अजुध्या प्रसाद ट्रेन्स क्लर्क (Trains Clerk) का पत्र प्राप्त हुआ, यह लिखता है कि उसकी आय कम थी, उसने मुझको स्मरण किया, मैंने उसको अन्तर में कहा कि यार्ड फोरमेन (Yard foreman) के लिये प्रार्थना पत्र भेजो सफल हो जाओगे, उसने ऐसा ही किया और वह यार्ड फोरमेन होगया। परन्तु कार्य कठिन था, न कर सका इस कारण छोड़ दिया। इसके उपरान्त वह रोया और मुझको स्मरण किया, अन्तर में प्रगट हुआ और पूछा कि क्या चाहता है? उसने कहा गार्ड बनादो। वह लिखता है कि मैंने कहा कि गार्ड बन जाओगे परन्तु कठिनाइयां आवेंगी। वह गार्ड की ट्रेनिंग के लिये गया, तो उसकी अनउपस्थिती में उसके पुत्र का देवलोक होगया और अब जब कभी वह गार्ड की ड्यूटी पर जाता है तो अस्वस्थ हो जाता है इसलिये वह आदेश चाहता है कि ऐसी परिस्थिती में क्या करे?

संसार वालो! मैं इस घटना से नितान्त अनभिज्ञ हूँ। जो कुछ सत पुरुष राधास्वामी दयाल ने वर्णन किया है कि

क्यों सहो काल की घात। जम धर धर मारे लात।

क्या यह असत्य है?

कदापि नहीं। प्राणी अपनी सुरत; अपने विचार भाव आदि को कभी इधर कभी उधर लिये फिरता है इसलिये इस मन तथा शरीर से लात खाता है।

मैं कभी भी इस सत्यता को डंडे मारकर भी व्यक्त न करता किन्तु एक तो हजूर सांवले शाह का आदेश द्वितीय दातादयालजी की आज्ञा जगत कल्याण की विवश कर रही है। कि स्पष्ट कर जाऊं कि जितने भी धर्म, पंथ, सम्प्रदाय, इष्ट आदि हैं यह सबके सब मानव के अपने अज्ञान, भ्रम और माया के अधीन स्थापित हैं, और मानव जाति अज्ञान वश मिट रही है।

संत कहते हैं कि हे मानव ! वह सत्त कबीर सब कुछ तेरे अन्तर ही है, बाहर नहीं है । जैसी तेरी आस, विश्वास, श्रद्धा और भाव है वैसा ही तेरा परिणाम होगा । यदि इस त्रगुण आत्मिक जगत से निकलना चाहता है तो:—

तुम चढ़ो गगन की बाट । तौ खुले अधर का पाट ॥

गगन में अर्थात मस्तिष्क में अधिक दूर तक तुम्हारा मन ही है और यह मन ही काल है । इसी के कारण शारीरिक और मानसिक आनन्द और प्रसन्नता है और इसी के कारण दुख आदि भी हैं । दातादयाल का एक शब्द अहा ! हा ! हा ! मेरे नाम है जो वास्तव में एक अमूल्य रत्न और सत्य है जिसकी समझ अब बृद्धा अवस्था में पूर्णतः आई है ।

काल चक्र है सहज हिंडोला, झूले अचरज न्यारा । आदि आदि

पूरा शब्द फ़क़ीर शब्दावली अध्ययन करके सन्तुष्टता प्राप्त करें । इसको अवश्य ही अध्ययन कीजिये ।

क्या यह वाणी असत्य है, नहीं सत्य है । इस काल और माया के चक्र से ऐ सतसंगियो आप सज्जनों ने मुझे निकाला जो यह वर्णन करते हैं कि मैं उनके अन्तर प्रगट हुआ आदि आदि चूँकि मैं प्रगट नहीं होता इसलिये ऐसा वर्णन करता हूँ । मैं इस बात पर विचार करने के लिये सन १९१९ में विवश हुआ था कि इस मन से परे, इस आत्मा से परे क्या वस्तु है । दातादयाल के संस्कार और अनुभव ने बताया कि मन क्या है, आत्मा क्या है ?

मन प्रत्येक प्रकार के विचारों का नाम है । जिसमें मनन शक्ति चित्त, शक्ति, बुद्धि और अहं भाव की शक्ति विद्यमान है ।

आत्मा प्रकाश (सावित्री) है जब यह शरीर में आता है तो मन, चित्त, बुद्धि और अहंकार उत्पन्न होते हैं । इसलिये मैंने अपने आपको इस प्रकाश के परे लेजाने का साधन किया । प्रकाश के परे आकाश है और आकाश का गुण शब्द है । इसमें किंचितमा

भी संदेह नहीं कि मुझको मानसिक सुमिरन, ध्यान से अत्यन्त आनन्द, प्रसन्नता, ऋद्धि, सिद्ध शक्ति मिली थी, मनकी मस्ती भी स्वयं लेता रहा हूँ, विवेक और ज्ञान तथा समझ बूझ भी प्राप्त हुई किन्तु खोज विवश करती थी कि इसके परे क्या है उसका अनुभव करूं

इसलिये मुझको बंकनाल से होकर जाना पड़ा। बंकनाल क्या है? जहां मन के समस्त विचार छूटने पर आते हैं और फिर आगे शब्द और प्रकाश का भान होता है इस संधि की अवस्था का नाम बंकनाल है। वहाँ क्या होता है?

शब्द रस भरो सुरत की माट। बंक चढ़ खोलो सुखमन घाट॥

अच्छे, बुरे, शुभ, अशुभ, भाव, विचार इंगला और पिंगला नाड़ियों में रहते हैं जहाँ न शुभ है न अशुभ है भाव विचार लुप्त हैं उस अवस्था का नाम सुखमन है। मैंने किसी जगह नाड़ियों की व्याख्या तो की हुई है उसका अध्ययन कर लेना। इसलिये इस अवस्था को कहते हैं—

नाम की मिली अपूरब चाट। अब सोऊं बिछाये खाट॥
चेतन की जड़ से खोली सांट। उलट मन कला खाय ज्यों नांट॥

मानवीय जीवन मन से प्रथक होकर केवल प्रकाश और शब्द का रूप होकर मन की खटपट, सरपट, अटपट से प्रथक हो जाता है। शब्द और प्रकाश चेतन है और शरीर जड़ है। मन तथा विचारों ने इन दोनों को बांधा हुआ है। इसका खुलना क्या है! शरीर से प्रकाश और शब्द को प्रथक करना है।

मानसर देखा चौड़ा फाट। गया फिर परदा सुन का फाट॥

मुझे समझ आगई कि यह मनका केन्द्र जिसमें समस्त प्रकार के मानसिक खेल, सांसारिक, धार्मिक और पांथिक थे एक बड़ा विशाल केंद्र था। आप सज्जनों की दया से इस मानसर अर्थात् मन की सरोवर से निकल गया हूँ। "गया फिर परदा

सुन क. ..ट।" यह किसने फाड़ा ? अनुभव और ज्ञान ने। यह किसने दिलाया ? दाता की दया से, उनकी आज्ञा के पालन से, आप सज्जनों, के अनुभव से मेरा वह मानसर मन का केन्द्र जिसमें रहता हुआ मैं अनेक प्रकार के दुख, सुख सहता था के रहस्य को समझा दिया। क्या मैं आपका आभारी नहीं हूँ ? अब मुझे ज्ञात हो गया कि जितने साधन मैं करता था सुमिरन, ध्यान, जप, तप, तीर्थ, व्रत, संयम नियम सब के सब इस मन के चक्र थे। जैसी आशा थी वैसी ही बासा थी। अब क्या है ?

काल की डारी गर्दन काट। कर्म की खुल गई भारी आंट॥
सुन्न का लिया अमीरस बांट। शब्द की खुली हिये में हाट॥

मन का रूप समझ में आ गया, उसकी गर्दन कट गई। अब यह दुखदाई तथा सुखदाई नहीं हो सकता है। किसी प्रक.र का कर्म करने की आवश्यकता नहीं रही। चूंकि मन का रूप समझ में आ गया। फिर क्या हुआ ?

मोह मद हो गए बारह बाट। मिले अब सतगुरु मेरे तात।

वह सतगुरू कौन है ? एक तो गुरू होता है, वह विश्वास और श्रद्धा है। दूसरा सतगुरू होता है वह शब्द और प्रकाश है। गुरू अर्थात् विश्वास और श्रद्धा से मानव की मानसिक और शारीरिक अवस्था श्रेष्ठ हो जातो है। जैसा ख्याल, वैसा हाल और सतगुरू के कारण सुरत को शान्ति मिलती है।

बाल ज्यों पावे पितु और मात। कहूं क्या खेल और विख्यात॥

जब सुरत मन से ऊपर जा कर शब्द और प्रकाश रूप हो जाती है तो इस सुरत को उसी प्रकार बेफ़िक्रा, बेग़मी और अचिन्तपना आ जाता है जिस प्रकार माँ की गोद में शिशु को बेफ़िक्री और निर्भयता होती है।

अब चले न माया घात। झड़ पड़ी वृक्ष ज्यों पात॥

माया ! बुद्धि, मन, चित्त और अहङ्कार के खेल का नाम है शब्द और प्रकाश के साधन से यह वस्तुएं नीचे रह जाती हैं।

कर्म की कीनी बाजो मात। लखी जाय सुन्न धुन की भांत ॥

कर्म अर्थात् विचार की शक्ति यहां काम नहीं करती है यदि प्राणी अपने अन्तर में अपनी सुरत को शब्द में लय कर दे। इस अवस्था में माया का खेल समाप्त हो जाता है और साथ ही कर्म की जुगत भी समाप्त हो जाती है।

टूट गया पिंड से मेरा नात। दिखाई गुरु ने अचरज क्रांत ॥

गुरु के वास्तविक दर्शन शरीर के सम्बन्ध समाप्त होने के पश्चात् होते हैं। फिर वास्तविक गुरु की क्रांति क्या हुई ? शब्द और प्रकाश।

प्राणी सम्पूर्ण आयु वाह्य गुरू से सम्बन्ध रखकर उसी को सब कुछ समझते हैं। मैंने भी ऐसा ही समझा था किन्तु अब अनुभव ने सिद्ध किया कि वह वास्तविक गुरु शब्द और प्रकाश स्वरूप है यह ज्ञान मुझको ऐ सतसंगियो तुम्हारे कारण हुआ। मैं चाहता हूँ तुम को भी तुम्हारा सतगुरु जो तुम्हारे अन्तर प्रकाश और शब्द स्वरूप है के दर्शन हों तब जाकर पूर्ण शान्ति मिलेगी।

पाई अब मैंने ऐसी शान्ति। अब रही न कोई भ्रान्ति ॥

चूंकि इस जीवन में यात्रा की इस अनुभव से मुझको अपने अन्तर ठहरने के लिए विवश होना पड़ा। संभव है कि यदि मैं कोई निज स्वार्थ रखता तो यहां तक न पहुँच सक्ता और न आपको सत्यता प्रगट कर सक्ता।

यह मार्ग कठिन है। मानव को मान, प्रतिष्ठा जीवन की आवश्यकतायें विवश करती हैं कि हम इस श्रेणी से पददलित हो जावें। मैं भी गिरता रहा हूँ। प्राणी निर्बल है किन्तु मुझे प्रसन्नता है कि मैं बच गया इसलिए अब समझ आगई।

गुरु करी प्रेम की दात। सुरत अब हुई शब्द की जात ॥

दाता ने मुझ अज्ञानी और भ्रान्तमय को अपना हाथ देकर रहस्य समझा दिया यद्यपि इससे भी आगे एक श्रेणी है वह है—

सुरत रहै लागी दिन और रात। शब्द रस अब नहीं छोड़ा जात ॥

अब मेरी दशा शान्तमय है इसलिए इस कृतज्ञता के अन्तरगत दातादयाल की शिक्षा को स्वच्छ और स्पष्ट रूप में फैलाता हूँ। साथ ही ऐ सतसंगियो आपकी कृतज्ञता को भी भूल नहीं सकता हूँ मैं सच्चे भाव और हृदय से आप सज्जनों के चरण कमलों पर अपना शीश नवाता हूँ।

शिष्य नवें गुरू को यह जाने सब लोग।
गुरू नवें जो शिष्य को वह विरला ही होग ॥

इस अनुभव के पश्चात एक ऐसी दशा कभी कभी आती रहती है जहाँ मस्ती में आकर किसी समय पद गाया करता हूं।

हम बासी उस देश के जहां माया ब्रह्म नाहिं।
गुरु चेला का व्यवहार नहीं शब्द प्रकाश भी नाहिं ॥
जात है केवल अनामपद रूप रंग कुछ नाहिं।
वहां से प्रगट होय कर वहाँ का पता बतायें ॥

इस अनुभव के आधार पर मैंने समझ लिया कि मानव चेतन का एक बुलबुला है। उस जात, परमतत्व तथा मालिक से निकला और उसी में लय हो जाता है।

सुरत हुई अतिकर मगनानी। पुरुष अनामी जाय समानी ॥

चेतन्यता में आकर पुकार करता हूँ।

गुरू का दम दम अब गुन गात। अमर पद पाया छूटा गात ॥
नाम धुन चली अधर से आत। अर्श का चरखा डाला कात ॥
राधास्वामी धरा शीश पर हाथ। मैं तजूँ उनका साथ ॥

राधास्वामी क्या है ? मेरी और सबकी जात (निज स्वरूप) है,

अकह, अपार अगाध, अनामी। अस मेरे प्यारे राधास्वामी ॥

मन और आत्मा के खेल का अनुभव हो गया। यह अर्श (लगन मण्डल) का चरखा था। चूँकि अभी मौज को कार्य लेना स्वीकार है अतः यही चाहता हूँ कि "प्राणी मात्र को शान्ति" यदि ऐसे पुरुष में जो इस अवस्था तक पहुंच गया हो कोई बल और शक्ति होती है तो मैं कहता हूँ कि मानवता का राज्य आवेगा। संसार के प्राणी रहस्य को समझ कर सुखी होंगे। धार्मिक पक्षपात और हठ धर्मी दूर होनी चाहिए। मैं संभवतः यह कार्य न करता केवल इस त्रगुण आत्मिक जगत में चूँकि रेडियेशन के नियम को समझता हूँ इसलिए कार्य करता हूँ। यदि रेडिएशन का नियम सत्य है तो मानव जाति में परिवर्तन का आना अनिवार्य है। आगे मौज। सन्त कबीर का शब्द है—

आग लगो असमान को, झर झर झरे अँगार।
जो न होते सन्त जन, जल मरता संसार ॥

कहाँ तक इस वाणी में सत्यता है समय बतायेगा जो प्राणी इस उच्च पद तक नहीं पहुँच सकते हैं उनको चाहिए कि अपने अपने विश्वास के अनुसार सच्चे बनकर अपने इष्ट को पूर्ण मानकर शरणागति हों। स्वयं ही वह इस पद तक अपनी सच्ची लगन द्वारा अवश्य पहुँच जावेंगे। यह मेरा अनुभव है।

गिरते पड़ते भी चलोगे, तो भी पहुँचोगे वहां।
बात सच्ची कह रहा हूं, लगन सच्ची चाहिए ॥

नोट—सम्भव है अनेक सज्जन मेरे इस लेख से बाह्य गुरू के प्रेम से मुझको वंचित समझें। मित्रो! यह बात नहीं है। किसी पूर्ण पुरुष का प्रेम तथा किसी को पूर्ण मान लो यह विश्वास ही तुम्हें इतना ऊँचा ले जा सकता है। अधूरे गुरू तथा अधूरे प्रेम से कोई सत्पद तक नहीं जा सकता है किन्तु जाता भी वही है जिसकी लगन पूर्ण हो। संसारी तथा मान

प्रतिष्ठा आदि के भूखे यहाँ तक नहीं पहुंच सकते हैं। इसलिए मेरे अनुभव ने मित्रो यदि कुछ नहीं होता तो सच्चे बनो और उस परम तत्व मालिक से किसी रूप में भी प्रार्थना किया करो। यह मेरा नियम रहा है इसलिए अब भी किसी समय चेतन्यता की दशा में कहता हूं कि हे मलिक मुझे उधर ले चल जिधर तेरी इच्छा है।

मुझे तू उस तरफ़ ले चल, जिधर भी तेरा जी चाहे।
मेरी क़िस्मत में जब तू है, तो फिर मुझको कमी क्या है॥

लक्ष्य कर्म भोग अथवा मौज

(ले० परमदयाल फ़क़ीर चन्द जी महाराज)

उपनिषद् में वर्णन है कि "चले चलो जब तक कि लक्ष्य को प्राप्त न कर लो पीछे मुड़कर मत देखो"।

बाल्य अवस्था से ही चलता रहा हूं।
सफ़र में मुसाफ़िर था, सफ़र को करता रहा॥
उस मंज़िले मक़सूद की आशा में चलता रहा।
थी आरज़ू कह जाऊँगा अपने सफ़र का तजरुबा॥
गुरू आज्ञा से जो अनुभव किया कहता रहा।
अब ऐसी जगह पर आहा ठहरा हूँ दोस्तो॥
आगे झुकूं तो हूँ नहीं, पीछे रहूँ कुछ भासता।
जब आगे झुक जाता हूं तो लामकानी बन गया॥
पीछे हटा तो बामकानी बनता रहा।
क्या ख़बर कब आगे बढ़ूँ और फिर न आऊँ॥
इसलिए निज अनुभव को हूँ लिख रहा।

यह बामकानियत जिसमें मैं अपनी चेतनता में आता रहता हूं क्या है? शरीर, मन और आत्मा के खेल हैं इनसे परे लामकानियत, अकालपद, अनामीपद, आदि हैं क्या पता संतों का भाव अनामीपद

अकालपद से बचा रहा हो मैं नहीं जान सका। जो स्वयं अनुभव किया उसको वर्णन कर रहा हूँ। वह भी अपने कर्म भोग वश। शायद न कहता पर मजबूरी है। कारण यह कि यह हुक्म हजूरी है। दाता ने फ़रमाया था कि फ़क़ीर ज़माना बदल जायगा। धर्म, पंथ सम्प्रदाय समाप्त हो जायगें। मेरी वर्णन शैली भी जन साधारण के आकर्षण के योग्य न होगी। तुम इस चोले को छोड़ने से पूर्व इस शिक्षा में परिवर्तन कर जाना जिससे कि भविष्य में मानव जाति पथ भ्रष्ट न हो और अपना जीवन सुख शान्ति से व्यतीत कर सके। इसलिए निज अनुभव निष्काम भाव से वर्णन करता रहता हूँ। इस निज अनुभव के आधार पर साहस पूर्वक कहता हूं।

वह मालिक जिसकी तलाश थी, वह मेरा अपना ही आप था।
आपा मेरा दर असल लामकानी, और मेरा आप था॥
ज़िन्दगी जब तक बामकानी है, इसमें है कैद दो बन्द।
और जिस्मो, मन, रूह तीनों यही संताप था॥
जब तक है हस्ती इन तीनों किस्म के मकान में।
इन्सान बनकर हर बशर दुख सुख को उठाता रहा॥
सफ़र से जब मुसाफ़िर उकता गया, तो सूझी निज देश को।
वह निज देश यह निकला, कि मुसाफ़िर मुसाफ़िर हो न रहा॥
यों समझलो कि ज़िन्दगी एक बुलबुला है, बना है तम्मबुजे हस्ती से। मौज जब आयेगी टूटेगा, और मिलेगा निज हस्ती से॥

इस अनुभव के आधार पर कहता हूँ।

अहंकार में आकर के इन्सान, बना रहा है टोलियां।
और बोलता रहता है, यहाँ पर लाखों क़िस्म की बोलियाँ॥
रूप अपने को जान ले, तू है एक बुलबुला शक्ले इन्सान।
अपने बहम में आकर, तू ने दुनियां को किया है परेशान॥
मुसाफ़िर है तो सफ़र कर खुशी से और चला चल।

आखिर एक दिन मंज़िले मकसूद पाकर मिट जायगी सब थकान ।।
तेरा घर है लामकानी लाज़वाली और लाइन्तहा अज़ाज़ ।
आ गया दुनियां में होश कर, ले सतगुरू का ज्ञान ।।

और भाई यदि प्राणी इस लामकानी में पहुँच कर कुछ बन जाता है जैसा कि जन साधारण का विचार है कि मनुष्य स्वयं ही पूर्ण है और बाकमाल है तो ऐसे पुरुष में यह शक्ति होनी चाहिए कि वह संसार में परिवर्तन ले आवे। इस बात की परीक्षा के लिए।

है अभी यह आरज़ू मानवता का राज आये।
कोई किसी प जुल्म करे न सताये ।।
इन्सानियत सीखे दुनियाँ खुशी से ज़िन्दगी गुज़ार दे ।।
खुद जीये औरों को भी जीने दे ।।

यदि ऐसा पांच वर्ष के भीतर नहीं होता है तो मैं इसके अतिरिक्त कुछ नहीं कह सकता कि यह सब रोचक और भयानक शिक्षा है। इन सन्तों, महात्माओं के अनुयाइयों ने निज स्वार्थ के लिए तथा पाँथिक व धार्मिक जगत की प्रतिष्ठा जताने के लिए कर्म ही ऐसा प्रोपेगैन्डा किया हुआ है कि जन साधारण उनके चक्र में फँस गये हैं और परस्पर घृणा, द्वेष और ईर्षा का दृश्य प्रत्येक पार्टी दिखाती रहती है।

मेरी बात पर जन साधारण सहमत न होकर क्रोधित होंगे। मैं कहता हूँ कि ऐ भाइयो क्रोध क्यों करते हो? प्रत्येक दावा प्रमाण चाहता है। यदि सन्तमत अथवा अन्य धर्मों की पार्टियाँ अपने अपने धर्मों, नेताओं, अवतारों, महापुरुषों को इतना ऊँचा पद देते हुए एक दूसरे को छोटा बड़ा समझ कर अपना अपना प्रोपेगैण्डा करते हैं तो वह अपने धर्म तथा गुरुओं और महापुरुषों जिनको वह मानते हैं उनसे सहायता लें और संसार में सुख शान्ति लाने का प्रयत्न करें। यदि ऐसा नहीं कर सकते

तो इससे स्पष्ट होगा कि कोई किसी की सहायता नहीं कर सकता है। यदि सहायता कर सकता है तो प्राणी अपने ही भाव, विचार और कर्म से सहायता कर सकता है। यह अनुभव मुझको अपने जीवन से हुआ। मैं तो प्रत्येक बात से अनिभिज्ञ होता हूँ और अनेक मित्र ऐसा कहते हैं कि मैंने यह कर दिया, वह कर दिया। यदि सत्यतः मैंने ही किया है अथवा कर सकता हूँ तो मैं यह भी कर सकूँगा कि संसार में मानवता का राज्य आजाय और हम सुखी रहें। इसलिये ऐसी इच्छा करता रहता हूं।

संभव है कि मैं अपने बल, पौरुष से अनिभिज्ञ हूँ और दूसरे महापुरुषों को इसका ज्ञान हो। जहाँ तक मेरा निज अनुभव है मैं तो गुरू मत को ज्ञानदाता, रहस्यदाता, भेददाता समझता हूं। जिसमे प्राणी को जीवन व्यतीत करने की विधि मिल जाती है इसलिए मैं अपने जीवन के अनुभव के आधार पर शिक्षा में परिवर्तन कर चला हूं।

ऐ मानव अपने आपको जान! तू उस परमतत्व, मालिक, सर्वाधार के अस्तित्व का एक अंश है। इस जीवन में जीने का रहस्य सीख, मन, कर्म वचन पर नियंत्रण रखकर अपने आपको निर्भय, निर्बैर, अचिन्त, अशोक बनाले। जो होना है होकर रहता है तू अपने हृदय को शुद्ध पवित्र रख।

दिल का हुजारा साफ़ कर, जाँ नाँक आने के लिये।
ध्यान गैरों का उठा, उसके बिठाने के लिये॥

वह पार परमतत्व है जो तेरो हो अपनी जात है। तुझसे पृथक नहीं है। जब तक जीवन है प्रसन्नता पूर्वक व्यतीत कर किसी के काम आ यही लक्ष्य मेरी समझ में आया है और उसको वर्णन कर दिया है।

ग़ज़ल

१—हमने दर परदा तुझे, शम्शे जबीं देख लिया।

अब न कर परदा तू, ऐ परदा नशीं देख लिया ॥
२—तेरे दीदार की, मुझको तमन्ना सो तुझे।
लोग देखेंगे वहाँ, हमने यहीं देख लिया ॥
३—हम नज़र बाजों से, तू छुप न सका जाने जहाँ।
तू जहां जाके छुपा, हमने वहीं देख लिया ॥
४—काबाओ, देरो, हरम, मसजिदो शिवाले में।
इससे क्या बहस है, देखा है कहीं देख लिया ॥
५—निकली मंसूर के मुँह से, अनलहक़ की सदा।
दार पर चढ़के तुझे, शम्शे जबीं देख लिया ॥

नोट—कहते हैं कि हुजूर पं० ब्रह्मशंकर जी महाराज आचार्य आगरा ने अपने पुत्र के विवाह पर एक वेश्या को मिसरा नम्बर २ पर अपना २५०) का दुशाला पारितोषिक में दे दिया था और ५००) में भी किसी को नहीं दिया।

होशियारपुर का मासिक सतसंग

(ले० परमदयाल फ़क़ीर साहब)

न आरजू अब सतसंग कराने की रही और न करने की।
बात जो मुश्क़ी थी सज्जनो वह है अब मुझे मिल गई ॥
शुभ भावनायें देता हूं और साथ में मत अजीजो।
बात समझो तब मिलेगी असली जिन्दगी ए अजीजो ॥

संसार में आया था। उसको देखकर उसके बनाने वाले का विचार उत्पन्न हुआ। हिन्दू शास्त्रों तथा सन्तमत आदि की वाणियों के संस्कार के अन्तरगत किसी ऐसी अवस्था को प्राप्त करना चाहता था जहाँ दुख कलेश आपत्ति आदि न हो। इस अवस्था का नाम अभय पद, अमर पद, निर्वाण पद आदि प्राचीन महापुरुष रख गये। मुझे नहीं पता कि जो अवस्था मैंने प्राप्त की तथा जिसका अनुभव किया क्या वही अवस्था वास्तव में अमर पद है अथवा और अन्य अवस्था। मैंने जो समझा वह है मैं अपने

शब्दों में वर्णन करता हूँ।

एक अवस्था अपनी का अनुभव हुआ। जहां नहीं कोई दूसरा हुआ ॥
न वहाँ प्रकृती है न माया। खालिक का नाम भी वहाँ नहीं रहा ॥
न वहाँ गुरू है कोई और न चेला। न वहां किसी गैर से है कोईमेला॥

दायम कायम सदा यह समझ में आ गया।
अभी तन मन है साथ में फ़कीर बन बोल रहा ॥
इस जिन्दगी का नामोनिशान वहाँ नहीं।
मगर इस अवस्था की ख्वाहिश किसी को नहीं ॥

जो व्यक्ति उस अवस्था के प्राप्त करने के इच्छुक हैं उनके लिए यह आवश्यक है कि वह पहले हँस बनें यह मेरा अनुभव है और सत कबीर का भी यही अनुभव है।

हंसन का इक देश है तहाँ जाय न कोई।
काग बरन छूटे नहीं कस हंसा होई ॥
हंस बसे सुख सागरे, झीलर नहीं आवे।
मुक्तामल को छांड़कर कहूँ चोंच न लावे ॥
मान सरोवर की कथा बगुला क्या जाने।
उनके चित तलिया बसे कहो कैसे माने ॥
हंसा नाम धराय के बगुला संग भूले।
ज्ञान दृष्टि सूझै नहीं वाही मत भूले ॥
हंसा उड़ हंसा मिले बकुआ रहे न्यारा।
कहै कबीर उठ न सकै जड़ जीव विचारा ॥

जब तक कोई इस हंस गति को पहले कोई प्राप्त नहीं करता तब तक अमर पद को प्राप्त नहीं कर सकता। कबीर के कथन के अनुसार हंस कौन है जिसमें काग वरन नहीं है जो बगुला वरन नहीं है। कौवा में जो अवगुण हैं जब तक मनुष्य उनको नहीं छोड़ता वह हंस नहीं बन सकता है। काग तथा कौवा में क्या अवगुण हैं ? १—वह सदैव मल, विष्टा का इच्छुक है।

मनुष्य की दृष्टि जब तक अवगुण की ओर है, द्वेश, ईर्षा, लोभ, मोह आदि विद्यमान है वह हंस नहीं हो सकता है। कौवा सदैव चौकन्ना रहता है। चौकन्ना रहना भय का चिन्ह है। इसलिये प्राणी के अन्तर जब तक किसी प्रकार का भय तथा डर है वह हंस नहीं हो सकता है। भय तथा डर प्राणी में अपने पाप तथा निर्बलता के कारण उत्पन्न होता है।

३—कौवा अति चालाक है वह सदैव छोटे-छोटे भोले भाले बच्चों के हाथ से रोटी आदि छीनकर ले जाता है। इसी प्रकार जो व्यक्ती भोले भाले जीवों के भोलेपन से अनुचित लाभ उठाकर अपना कार्य सिद्ध करता है वह कभी भी हंस नहीं हो सकता है।

व्यवसाई वर्ग तथा अन्य व्यक्तियों के जीवनों की दशा देखो किस प्रकार चालाकी से भोले भाले प्राणियों को लूटते हैं अथवा अपने जाल में फँसाकर अपना नाम प्रकाशित करते हैं। अधिक न कहलवाओ वर्तमान महात्माओं तथा नेता गणो अथवा अन्य कार्यकर्ताओं के जीवनों पर दृष्टि डालो।

हँस और बगुला में क्या अन्तर है ?

बगुला सदैव थोड़े जल में रहकर मछलियाँ खाता है। प्राणी संकीर्ण हृदय होकर अपना जीवन व्यतीत करता है। संकीर्ण हृदय, संकीर्ण मनवाला तथा कंजूस कभी भी हंस नहीं हो सकता है। इसलिए संकीर्ण विचार, पक्षपाती, मलीनता और अवगुण रखने वाला प्राणी कभी हंस की संगत नहीं कर सकता, वह ठहर नहीं सकता है और न हंसगती को ही प्राप्त कर सकता है।

अतः आप सज्जन जो सतसंग में केवल उस अमर पद की इच्छा रखते हुए आते हो तो सर्व प्रथम काग और बगुला के अवगुणों को छोड़ो। यदि यह नहीं छोड़ना चाहते हो तो सतसंग से कोई

लाभ नहीं। अपना समय नष्ट करते हो और मुझे भी कष्ट देते हो। समझ गये। अब वह अमर पद क्या है?

हंसा अमर लोक निज देसा। टेक
ब्रह्मा, विष्नु, महेश्वर, देवा पड़े भरम के भेसा।
जुगन जुगन हम आय चिताये सार शब्द उपदेसा॥
शिव सनकादिक और नारद हैं गहै काल करम कलेसा।
आदि अन्त से हमें न चीन्है धरत काल को भेसा॥
कोई कोई हंसा शब्द विचारे निर्गुण करे निवेरा।
सार शब्द हृदय में झलकै सुख सागर की आसा॥
पान परवाना शब्द विचारे नरीर लेखा पाये।
कहें कबीर सुख सागर पहुँचे छूटे करम का फांसा॥

अब विचार कीजिये कि वह अमर पद क्या है जिसका मैं पहले वर्णन कर चुका हूँ?

एक अवस्था अपनी का अनुभव हुआ। जहां नहीं कोई दूसरा हुआ॥

ब्रह्मा, विष्नु और महेश यह इस रचना के करने वाले, स्थिती और प्रलय की शक्तियां हैं। जब तक प्राणी का मन कुछ सोचता, समझता और गुनता रहता है उसके अन्तर यह तीनों शक्तियां विद्यमान रहती हैं और जब तक सोच, समझ और विचार विद्यमान हैं वह अमर पद से दूर है। यह मेरा अनुभव है।

जहाँ तक सृष्टि के कर्म का सम्बन्ध है वहां तक उनका कर्म अनिवार्य है और इसके बिना गुज़ारा नहीं हैं। किन्तु यह शक्तियाँ स्वयं भी उस अमर पद से बंचित है। अमर पद की प्राप्ती केवल मनुष्य की ज़ात कर सकती है। इन समस्त देवताओं को यह अमर पद प्राप्त नहीं हो सकता है। क्योंकि उनका कर्म रचना करने का है। हाँ! प्रलय के पश्चात् संभव है कि ये इस अमर पद में लय हो जांय किन्तु मनुष्य इस जन्म में ही इसका अनुभव कर सकता है।

इसलिए सम्पूर्ण योगी, ज्ञानी, ध्यानी, साधू, भक्त, हंस तक भी बिना सार शब्द अर्थात् रहस्य तथा भेद के इस श्रेणी तक नहीं पहुँच सकते हैं। सन्त कबीर की वाणी है—

जुगन जुगन हम आप चिताये सार शब्द उपदेसा।
शिव, सनकादिक और नारद गहे काल करम कलेशा॥

योगी को भी दुःख, भक्त को भी प्रेम का दुःख ज्ञानी को भी निश्चयात्मिक होने की इच्छा, इसलिए सन्तमत का लक्ष्य निर्वाण पद और अमर पद है जो किसी बिरले को ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि सन्त किसी से साधारणतः अपने मत का भेद नहीं देते। कौन समझेगा?

मित्रो! मैं क्या कहूँ? मैं जहां चढ़कर बोलता हूँ उसको समझना अति कठिन है। इसलिए सर्व प्रथम हंस बनो। जब तक हंसगती नहीं आवेगी आगे का मार्ग नहीं खुलेगा। इसलिए मैंने 'मनुष्य बनो' की पुकार की है। मनुष्य बनना क्या है? हंस बनना है। इस सन्तमत की शिक्षा तथा निर्वाण व अमर पद मनुष्यों के लिए है। इस मनुष्यता के आगे फिर किसी सन्त के संस्कार से तुम में अमर पद आवेगा। जब हंस गती तथा मनुष्यता आजाय तब साधन करो फिर सार शब्द में सुरत ठहरेगी। बिना साधन और अभ्यास के कोई निर्वाण पद तथा अमर पद को प्राप्त नहीं कर सकता है। यह मेरा अनुभव है। अपनी बीती कह रहा हूँ। यह अमर पद तथा निर्वाण कहां है? मस्तिष्क को शिखा स्थान पर है नीचे नहीं है।

प्रमाण में अपना जीवन और सन्त कबीर की वाणी है—

चलो जहां बसत पुरुष निर्वाना। टेक
अवगति गति जहां गति गम नाहीं दोइ अंगुल परमाना।
रवि शशि दोनों पवन चलत हैं तेहि बिच धरम न ध्याना॥
तीन सुन्न के पार बसत है चौथा तहां स्थाना।

उपजा ज्ञान ध्यान दृढ़ जागा मगन भया मस्ताना ।।
पोहि के डोरी चढ़ौ गगन पर सुरत धरौ सतनामा ।
द्वादश चले दसौं पर ठहरे ऐसा निर्गुन नामा ।।
अजर अमर जहाँ जरा मरन नहीं पहुँचे सन्त सुजाना ।
बहुतक चढ़ चढ़ कर फिर आये बिरला जन ठहराना ।।
शब्दे निरख परख छबि झलकै सुमिरन मूल ठिकाना ।
उलट पवन घट चक्र बेधे नयनन सेत अघाना ।।
शब्दै शब्द प्रगट भये बाहर कह गए वेद पुराना ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो शब्द में सुरत समाना ।।

यह पुरुष निर्वाण तथा निर्वाण अवस्था क्या है ? मस्तिष्क में वह स्थान जहां हमारे अस्तित्व में गति और चाल नहीं होती है ।

अवगति गति जहाँ गति गम नाहीं दुइ अगुंल परवाना ।

यह दो अंगुल स्थान जहाँ गति नहीं है वह मस्तिष्क की शिखा का स्थान है । जब तक सुरत वहाँ जाकर अन्तर में नहीं ठहरती इस अमर पद तथा निर्वाण पद का पूर्ण ज्ञान अथवा अपने अमर होने का निश्चय रूप से अनुभव नहीं हो सकता है । मुझे नहीं हुआ था, औरों के सम्बन्ध में नहीं कह सकता हूँ । अनुमान ज्ञान और प्रमाण संकल्प से मान लेना और बात है ।

ज़िन्दगी मेरी खिल जान में बीती । करी बहुत मैं प्रेम प्रतीती ।।
आखिर को सूझी यह रीती । छोड़ पिंड, अण्ड, ब्रह्मांड की रीती ।।
तब पाया निर्वाण ।

मित्रो ! मैं प्रतीत करता हूँ कि मैं क्या किसी की सहायता कर सकता हूँ ? नहीं । अपनी सहायता तुम स्वयं कर सकते हो । वाह्य सतसंग तुमको रहस्य समझा देगा । वह भी यदि सतसंग कराने वाला स्वयं साधन सम्पन्न है अन्यथा नहीं ।

नहीं तो पुस्तकों के कीड़े बनो रहोगे और तुमको मेरे जैसे महात्मा समस्त आयु लूटते रहेंगे।

सुनो ! आज एक तिरखान है। मैं उसका नाम नहीं बतलाता हूँ उसका पत्र आया। वह व्यक्ती बाल्यअवस्था से भक्ति आदि के चक्र में विभिन्न साधू, सन्तों के पीछे फिरता रहा और यह लिखता है कि उसने किसी एक महात्मा से संबंध उत्पन्न किया। वह महात्मा अपने आपको कबीर का अवतार कहता है। कुछ वर्ष उसने उस महात्मा की सेवा की और उसके मकान और दुकान बनवाये। इसके अतिरिक्त और भी उसके सेवक थे। उसके गुरुमुख शिष्य ने उसकी पत्नी से अनुचित कार्य किया। जब स्त्री ने भांड़ा फोड़ा तो गुरू महाराज ने उसको मारा और उसके पति को भी कहा कि इसको मारो और घर से निकाल दो। उसका शोक युक्त पत्र आज ही मिला है क्या बताऊँ, ऐसी घटनाऐं सुनकर हृदय में चोट लगती है और संसार को इस पाखँडवाद गुरुमत से मुक्ति देने का साहस किया और सच्चा गुरुमत जैसा समझा वर्णन करता रहता हूँ।

दर्द दिल रखकर मैं प्रगट हुआ संसार में।
कह रहा हूं बात सच्ची गुरू मत नहीं समझा है संसार में।।
गुरु है ज्ञान भरम और भेद और गुरु कोई नहीं।
गुरु है सतपुरुष की जान शब्द बिन गुरू कोई नहीं।।
मत लुटो लोगो अज्ञान में क्यों बे इज्जती कराते हो।
बात समझो राज समझो क्यों भरम में उम्र गँवाते हो।।

बात को तो प्राणी समझते नहीं किन्तु गुरू गुरू पुकारते फिरते हैं। इससे क्या बनता है ? इसलिये आप सज्जन यदि सतसंग में आते हो तो बात को समझो। यदि वास्तव में मैं संत हूँ तो तुम्हारे भ्रम, शङ्का, संदेह आदि चले जाने चाहिए। साधन करना तुम्हारा काम है। यदि तुममें भावुकता है तो स्वयं ही

सतसंग का प्रभाव पड़ेगा।

मैं विरोध की ओर किंचित मात्र भी ध्यान न करता हुआ वर्णन किये जाता हूँ कि ऐ मानव! तुझको तेरे कर्म का फल मिलेगा। सतसङ्ग केवल किसी सत्त पुरुष का हो जो डेरे, धाम, मसजिद, मंदिर गुरद्वारा तथा निज स्वार्थ लोभ लालच पंथ आदि से रहित है। स्त्रियों का गुरु स्त्री ही होनी चाहिये। यह भी प्रारम्भिक अवस्था में।

❀ प्रार्थना ❀

दीनदयाल दुख भंजन, कृपानिधि दयाल मन रंजन।
जीव पड़े अन्धकार, सार न जानें, चलते चाल यह उलटी गुरुमत न पहुँचाने॥

कर दया मेट दे अज्ञान जीव का राधास्वामी।
तुम दयाल अकाल हो सबके अन्तरयामी॥
तुम दया बिन कभी न कटें इनके बंधन।

विचारों का प्रभाव

प्राचीन काल में यहाँ विक्रमादित्य राजा राज्य करते थे। वह बड़े धर्मात्मा और न्यायी राजा थे। आज भी लोग उनके धर्म और न्याय की प्रशंसा करते हैं।

एक दिन कुछ ग्वाले एक गाँव के निकट एक जंगल में खेल रहे थे। वहाँ उन्होंने एक मिट्टी का ढेर देखा जो एक पत्थर से ढका हुआ था। उनमें से एक ग्वाला उस पत्थर पर बैठ गया। उसने अपने साथियों को बुलाया और कहा, मित्रो! अब मैं राजाविक्रमादित्य हो गया हूँ। तुम लोग अपने मुकद्दमे मेरे पास ले आया करो। मैं न्याय कर दिया करूँगा। उस ग्वाले ने अपने साथियों के मुकद्दमों का निर्णय किया। उसके निर्णय इतने अच्छे थे कि यह समाचार दूर दूर तक फैल गया। जो झगड़ा करते थे इस

ग्वाले के पास आते थे। प्रत्येक व्यक्ति उसके न्याय से इतना संतुष्ट होता था कि जिसका कुछ कहना नहीं।

दूध का दूध, और पानी का पानी।
कोई कोई बिरला, समझे यह बानी॥

जब वह मिट्टी का ढेर खोदा गया तो लोगों को मालूम हुआ कि सचमुच वह राजा विक्रमादित्य के बैठने का स्थान था। इससे सिद्ध हुआ कि इस स्थान पर उनके संस्कार विद्यमान थे। यही सन्तमत की शिक्षा है। हमारा हर अमल हर फ़ेल मुस्तक़बिल बनाता है।

दातादयाल जी का पत्र दयाल नन्दू भाई जी के नाम

प्यारे नन्दू! राधास्वामी।

याद की उल्टी सूरत दया है। जो याद करते हैं वह दया पात्र होते हैं।

जीवन का नाम ही काम है। जीवन है और काम। काम है और जीवन। काम के बिना जीवन नहीं। और जीवन के बिना काम नहीं। इससे अधिक कोई क्या कहे।

जो जिसके तस्सवुर में रहता है। या तो उसकी सूरत (कैफ़ियत) में रहता है। या उसकी 'सूरत बनाया करता है। तस्सवुर के मानी ही सूरत बनाने के हैं।

इक़रार और इन्कार दोनों तुम्हारे सहारे रहते हैं। कभी यह कभी वह। कभी तुम औंधे घड़े हो कभी तुम सीधे घड़े हो। Concave Convex तुम्हारी अपनी सजधज है। कौन असली? कौन नकली? इसे तुम जानो।

जो छोटे को ढाढस देगा उस में बड़ाई आयेगी जो बड़ों की

ओर दृष्टि रक्खेगा छोटा होगा। जो छोटों पर दृष्टि रक्खेगा बड़ा होगा। इस बात को तो कोई कोई समझ सकता है। छोटाई के साथ बड़ाई रहती है।

कर्म भोग अथवा मौज

ले० परमदयाल फ़क़ीर साहब जी महाराज

यह जो मैं अब लिख रहा हूँ मैंने तीन चार बार लिखा परन्तु मन ने आज्ञा नहीं दी कि मनुष्य बनो पत्रिका में प्रकाशित करने को भेजूं किन्तु कोई शक्ति विवश कर रही है कि लिखकर अवश्य भेज दे। इसलिये मैंने लिखना आरम्भ किया।

सुनो भारत वासियो! संभव है कि तुम मुझे दीवाना समझो। समझते रहो।

इश्क़ में तेरे कोहे ग़म सर पर लिया जो हो सो हो।

मेरा अपना ही भाव विश्वास और विचार हजूरदातादयाल महऋषी जी महाराज के चरण कमलों में लग गया। मैंने अपने ही विश्वास के अन्तर्गत उन को उस परमतत्व आधार का ज्ञान स्वरूपी अवतार माना और चूँकि उन्होंने तथा परमतत्व ने उस रूप द्वारा मुझे जगत कल्याण का कार्य दिया। मैं घसीटा जा रहा हूँ। जानता हूँ मेरी कोई न सुनेगा। मैं कोई पद अधिकारी नेता तथा मानवीय पुरुष नहीं हूँ फिर भी मेरा ही कर्म तथा मौज मुझको इस ओर घसीट रही है।

आज समाचार पत्र में पढ़ा कि स्वतन्त्र पार्टी ने अपना नारा जयहिन्द की अपेक्षा जय स्वतन्त्र रक्खा है। नाना प्रकार के विचार उत्पन्न हुए श्री विनोवा भावे जी के पैरोकार नारा लगाते हैं "धन और धर्ती बटकर रहेगी"। तात्पर्य यह है कि विभिन्न प्रकार की पार्टियां अपना अपना राग अलापती हैं। यह संसार चूँकि भिन्नता का स्थान है। भिन्न विचार होने अनि-

वार्य हैं। यदि यह विभिन्न पार्टियां शक्तिशाली हो जांय तो इसका परिणाम उपद्रव होगा। इन भिन्न भिन्न विचारों के कारण परस्पर युद्ध हुए और भारत के विभाजन के साथ जो अत्याचारों का दृश्य सम्मुख आया इतिहास सिद्ध करता है।

• इसलिये कर्म भोग वश जगत कल्याण के हेतु अपना विचार व्यक्त कर रहा हूँ इसके परिणाम की ओर ध्यान नहीं है।

स्मरण रहे कि भारत वर्ष कल्याण यह विभिन्न धार्मिक और राजनीनिक पार्टियाँ न कर सकेंगी। क्यों? जो व्यक्ति ऐसी पार्टियाँ बनाते हैं वह त्रुटी पर होते हैं।

श्री विनोवा जी, श्री राजेन्द्रप्रसाद, श्री नेहरू, श्री राज गोपालाचार्य, पण्डित पन्त ये सब वृद्ध हैं इसलिए हम साधारणतः वृद्धों की सम्मति को सत्य मानते हैं क्योंकि इन्होंने अधिक अनुभव किये हैं। किन्तु चूँकि मैं मानसिक अवस्था का पूर्ण ज्ञाता हूं इसलिए ऐसा कहता हूँ कि वृद्ध पुरुष केवल उस समय अनुभवी होता है जब कि उसकी बाल्य और युवा अवस्था भावुकता तथा अनुचित इच्छाओं में व्यस्त न रहा हो वरन् जो जिस प्रकार के विचार और भाव रखने वाला प्राणी है जब वह वृद्ध होगा उसके अपने ही विचार पूर्ण संस्कारों के कारण उसी ओर अधिक झुकेंगे जो उसके मन में समस्त आयु रहे हैं इसलिए समस्त वृद्ध पुरुषों के विचार लाभप्रद नहीं हो सकते हैं। मन की आन्तरिक दशा को समझना टेढ़ी खीर है अर्थात् अति कठिन है।

साधारणतः यह दृष्टिगोचर होता है कि वृद्ध अवस्था में अनेक व्यक्तियों को लोभ, मोह, तृष्णा आदि अधिक होते हैं। अनेक वृद्धों को पारिवारिक मान, प्रतिष्ठा का ध्यान अधिक हो जाता है परन्तु ऐसा पुरुष जो अपनी बाल्य और युवा अवस्था में ऐसे मलीन विचारो के अन्तरगत नहीं आया और स्वतन्त्र विचार वाला, निर्पक्ष, निर्वैर, घृणा रहित रहा है वह जो सम्मति

वृद्धा अवस्था में देगा वह सत्यतः लाभप्रद और कार्य में आने के योग्य होगी।

अब युवा पुरुषों की ओर ध्यान दीजिये। युवा वर्ग राजनीतिक कार्यों में अधिक लाभप्रद सिद्ध होता है क्योंकि वह वृद्धों से अधिक परिश्रम और त्याग कर सकते हैं परन्तु इनको सत्य पथ प्रदर्शन की आवश्यकता है। यह वर्ग अधिकतर भावुक होता है।

मेरा अनुभव इन विभिन्न पार्टियों की उपस्थिती जो राजनीतिक दृष्टिकोण से स्थापित हो रही हैं यह कहता है कि यदि इन पार्टियों की रोक थाम न की गई तो महात्मा गांधी जी के राम राज्य का स्वप्न किसी भी दशा में फलित न होगा। इसके अतिरिक्त यह संभव है कि ये पार्टियाँ गृह युद्ध और उपद्रव का कारण न बन जांय।

यह संसार संकल्पमय है। उपनिषद् स्पष्ट वर्णन कर रही है कि यदि संसार में उन्नति चाहते हो तो सब एक ओर मुख करो, साथ-साथ पग उठाओ पीछे मुड़कर न देखो आदि आदि यह संकेत है ध्यान दो और सावधान हो।

इसलिए मेरा अधिकार तो नहीं है किन्तु विवशतः अपना कर्तव्य समझकर लिख रहा हूँ कि पार्टियां बनाना छोड़ो। देश के योग्य अनुभवी पुरुषों को शासन में ले आओ जो निष्काम और स्वार्थ रहित हों। जब तक प्रजातन्त्र राज्य के विधान के अनुसार जन गणना के चुनाव होते रहेंगे यह आपत्तियाँ समाप्त न होंगी। शासन का लालच आदि जन साधारण को पार्टियाँ बनाने के लिए विवश करता रहेगा जो मानवीय प्रकृती है और इसका समझना अति दुस्तर है। मैं इसका कोई दावा नहीं करता परन्तु योग साधन से जो अनुभव किया है उसी के आधार पर लिख रहा हूँ। अब प्रश्न यह है कि क्या कोई पार्टी संसार को

सुखी कर सकती है ? नहीं। संसार को सुखी तथा दुखी उसके कर्म और विचार ही कर सकते हैं।

कोई सुख दुख का नहीं है दाता यह इन्सान की भूल सब।
कर्म अपना करते हैं प्राणी अनुकूल और प्रतिकूल सब ॥
यह जगत है वाटिका करते हैं प्राणी आके काम।
कर्म के अनुसार उनके कांटे हैं और फूल सब ॥
ऐ विनोवा, नेहरू और गोपालाचार्य महापुरुषो।
अपने घर की आप ही उलटाया करते हैं चूल सब ॥
तुम सब बड़े हो बुजुर्ग, तुम सबको मैं क्या कहूँ।
संभलो तो बहतर है वरना पछताओगे आप सब ॥

देश का भला केवल इसी बात में है कि हम सब काम करें। सबको काम दो और मनुष्य बनो।

जहाँ आपका प्रजातन्त्र आपको भिन्न भिन्न पार्टियां बनाने की आज्ञा देता है वहाँ मैं भी अधिकार रखता हूँ कि पार्टी बनाऊँ। इसलिए मैं अपने थोड़े से मित्रों को जो बहुत ही थोड़ी सी संख्या में हैं यह कहूँगा कि यदि तुम इस सङ्कटमय परिस्थितियों से बचना चाहते हो तो किसी भी राजनीतिक, धार्मिक क्षेत्र में सम्मिलित न हो। केवल काम करो, काम करो, अपने परिवार का पालन करो, प्रातः सायं राम राम, दिन भर काम, रात को विश्राम अथवा अपने विश्वास के अनुसार अपने मन पर नियंत्रण रखने का साधन करो। चूँकि मनुष्य को उसके अपने ही कर्म और विचार का फल मिलता है इसलिए आपको इन समस्त पार्टियों से प्रथक रहने में हीं सुख शान्ती मिलेगी।

जानता हूँ कोई सुनता नहीं मैं अपना कर्म किये जाता हूँ।
सच्चे दिल से मानव जाति का भला चाहता हूँ ॥
यही है कर्म मेरा और यही है धर्म अपना दोस्तो।
अपने कर्म भोग वश हित और मत देता रहता हूँ ॥

पत्रोत्तर दातादयाल जी का भाई मुन्शीलाल जी के नाम

खत मिला और पढ़ के खत को, हो गया दिलशाद मैं।
धाम में रहता हूँ पर, इस जा नहीं आबाद मैं॥
खुश रहो, खुशियों को अपने, हर तरफ़ दो तुम बखेर।
खुशनुमाँ हों जिन्दगी, इसमें न होने पाये देर॥
दिल अगर खुश है, तो दुनियाँ भी खुशी से है भरी।
यह खुशी उड़ती रहे, चारों तरफ़ मिस्ले परी॥
मैं यही कहता हूँ अपने दास को।
देखना दिल से न रुख़सत करना हरगिज़ आस को॥
तुम हो खुशदिल मुझ को इत्मीनान है।
खुश तुम्हारा जिस्म, दिल और जान है॥
तुम अगर खुश रहते हो मैं साथ हूं।
लाख बातों की यही एक बात हूँ॥
तुमने क्या समझा मुझे, सोचो ज़रा।
मैं तुम्हारी ज़ात हूँ, मरदे खुदा॥

दया करो मेरे साँईयाँ, मैं हूँ भव जल मांहि।
आप ही बह जाऊंगा, जो नहीं पकड़ो बांह॥
राधास्वामी दीन हित, मेरी करो सहाय।
मैं अवगुन की खान हूँ, अवगुन रहा समाय॥

ग़ज़ल पीरेमुग़ां साहिब।

जिसको तुम कहते हो सूरत, नूर है वह नूर है।
अपनी सूरत को जो देखे, वह दिले मसरूर है॥
अपने से क़ुरबत हुई, क़ुरबत खुदा की है यही।
अपने आपे से नहीं क़ुरबत, खुदा तब दूर है॥
मतलये उल अनवार है, और मज़हर उल अनवार है।
दिल हमारा इस जहाँ में, सच्चा कोहे तूर है॥

आंख, कान और होंट को कर बन्द, और बातिन में देख।
तुझ को क़ुरबत हक़ से है, या हक़ से तू कुछ दूर है॥
जब कभी ऐसा करेगा, पायेगा फिर राज़को।
कहते रहते हैं इसे, अपना यही दस्तूर है॥

फ़ेमीली प्लानिंग

(ले० परम दयाल फ़क़ीरचन्द जी महाराज)

सम्पादक दयाल पत्रिका ने फ़ेमीली प्लानिंग के क्रम में अपना एक लेख लिखकर स्वीकृतो के लिये मेरे पास भेजा है जिसमें उसने अनेक गर्भ निरोध औषधियों और प्रयत्नों आदि का उल्लेख किया है मुझे इस विभाग का कुछ अनुभव नहीं है परन्तु एक विचार वर्षों से जो मेरे मस्तिष्क में चक्कर काट रहा है जिसको व्यक्त करता हूँ मैं लज्जित हूँ कि मैंने स्वयं जो अपराध किया है जिसका कि आज मुझको विचार आता है क्योंकि कुछ वर्ष पूर्व मेरा ध्यान इस ओर नहीं गया था मुझे कोई अधिकार नहीं कि मैं अपना विचार किसी पर प्रगट करूँ। बात आश्चर्य-जनक है। संभव है कि पाठक गण मुझको दीवाना समझें।

जिन व्यक्तियों को आवागवन की चिन्ता है और इससे छुटकारा पाने के लिये गुरू के चरणों पर शीष नवाते हैं, साधन और अभ्यास करते हैं तथा वह प्राणी जो इस संसार को दुख का सागर समझते हैं क्या वह जब ऐसा मानते हुये संतान उत्पन्न करते हैं तो वह अपराधी और मूर्ख नहीं हैं। स्वयं तो इस जन्म मरण और चौरासी के चक्र से बचने का उपाय करते हैं और अन्य जीवों को उत्पन्न करके आवागवन के चक्र में फँसाते हैं। बात ध्यान देने योग्य है। विचारवान इस पर विचार करें। आश्चर्य तो यह है कि मेरे जैसे साधू, महात्मा, संत कहलवा कर औरों को आवागवन के चक्र से बचाने के ठेकेदार होते हुये स्वयं इस

अपराध के भागी होते हैं। हमारा क्रियात्मिक जीवन हमारे कथन से नितान्त प्रतिकूल है।

इससे दो बातें सिद्ध होती हैं एक तो कोई ऐसी शक्ती है जो हमको इस आवागमन के चक्र से निकलने नहीं देती और हमारी बुद्धी पर आवरण पड़ा रहता है। मैं अपनी त्रुटी को स्वयं प्रतीत करता हूं यद्यपि इस विचार से इतना लाभ अवश्य हुआ कि मेरा मोह तथा सम्बन्ध संतान से समाप्त होगया। काम करता हूं और मगन रहता हूं। द्वितीय यह कि आवागमन आदि एक भ्रम है। जो प्रकृती की मौज है वह होता रहता है।

यदि पिछली बात को मान लें तो सब बातों का निर्णय होगया। जो हो रहा है ठीक है। यदि चिन्ता करनी है और फेमीली प्लानिंग की योजना बनानी है तो उसमें यह भी सम्मिलित होना चाहिये कि भाई आप तो स्वयं आवागमन के चक्र और अनेक आपत्तियों में फँसे हुये हो फिर और संतान उत्पन्न करके भविष्य के जीवों को भी इस आपत्ती में क्यों डालते हो। अतः यदि अपने काम अङ्ग और भोग विलास की तृप्ती के लिये तथा बृद्धा अवस्था में सेवा लेने के लिये तथा संसार के क्रम को प्रचलित रखने के लिये संतान उत्पत्ती की इच्छा है तो एक दो सन्तान से अधिक उत्पती न करो।

इस युग में जितनी संतान अधिक होगी उतना ही दुःख अधिक भोगना पड़ेगा। आहा! मुझे स्मरण है कि मेरे एक पुत्र की मृत्यु हुई तो मैं प्रसन्न था चाहे आप इसको अनुचित समझें। क्यों? इसलिये नहीं कि मैं ज्ञानी ध्यानी था परन्तु इसलिये कि मैं निर्धन था क्योंकि सत्य पथ पर आरूढ़ था। यदि वह जीवित रहता तो मैं संभव था कि उसकी शिक्षा और प्रतिपालन के लिये कुछ हेरा फेरी करता। इसलिये मालिक ने दया की जो किया अच्छा किया।

एक विवाहिता पुत्री का देवलोक होगया इस पर प्रसन्न हुआ।

इसका कारण यह है कि वर्तमान युग के जामाता और उसके माता पिता इच्छा करते रहते हैं कि प्रति अवसर पर उनको कुछ सुसराल से मिलता ही रहे। मैं कहाँ से देता ? जब से नवीन हिन्दू कोडबिल हमारे शासन ने प्रचलित किया है इसमें बहिन और भाई का परस्पर विरोध बढ़ जाने की संभावना है। प्रेम प्रीति का अन्त होता जा रहा है। इसलिये इस समय अति आवश्यकता है कि संतान जितनी सूक्ष्म रूप में हो अच्छा है जिससे कि परस्पर उपद्रव न हों और माता पिता को कष्ट न उठाना पड़े।

मैं इसीलिये कहता हूँ कि ईश्वर पूजा की अपेक्षा गुरु पूजा प्रचलित हो जाय तो श्रेष्ठ है गुरू पूजा से मेरा प्रयोजन जीवन को श्रेष्ठतर व्यतीत करने का रहस्य सीखना है। इस से स्वयं ही आवागमन से निवृती हो जावेगी और कष्ट में भी कमी हो जावेगी। सतसंग किसी कामिल पुरुष का करो। और जीने का राज़ उससे लो। मन पर क़ाबू पाकर भाइयो। जग में जीओ और जीने दो॥
उम्र खोकर जो कुछ समझा। उसको कर्म भोग वश कह चलो।
अब आखिरी वक्त है मेरा। ऐ दाता अपनी गोद में ले चलो॥

दातादयाल जी का एक शब्द।

मिल गये आकर जो मुझ से, समझो दर्शन हो चुका।
मन धरा जब भेंट में, मेरा ही तन मन हो चुका॥
तुम हो मुझ में मैं हूं तुम में, और अब क्या चाहिये।
धीरे धीरे होगा सब दर्शन का साधन हो चुका॥
बातें सुनलीं बैठ कर, इनको गुनों तुम रात दिन।
करलो कुछ मन में मनन, बचनों का श्रवन हो चुका।
जाने वाले, मिटने वाले यह नहीं हैं संस्कार।
मुक्ती मिल जायेगी, जब बन्धन का जीवन हो चुका॥
राधा स्वामी की दया से, होंगे पूरे काम सब।
देर बनने में नहीं, करमों का अनबन हो चुका॥

कर्मभोग अथवा मौज

(ले० परमदयाल फ़क़ीर साहब जी महाराज)

चला था मैं मित्रो राम मिलन को। थी आशा कह जाऊंगा अनुभव मित्रन को ॥

अहा राम है मस्ती आनन्द अपारा। हर्ष रहा है मेरा तन मन सारा ॥

खुशी ही खुशी का है कारोबारा। सीस नवाऊँ मैं अपने गुरुअन को चला ॥

थी अभिलाषा देखूँ घट की लीला। देख देख हुआ हूँ अलवेला ॥
मस्ती आनन्द से हुआ मेरा मेला। कह जात हूँ अपने मित्रन को ॥
मेरे अन्दर फूटी विज्ञान फुलवाड़ी। अनुभव की मोय लगी रहत है ताड़ी ॥
घट में है आनन्द की बहारी। हर्षित रहूँ देख अपने कर्मन को ॥

प्राचीन ऋषी और महापुरुष कह गये कि "नर शरीर सुर को भी दुर्लभ" पता नहीं शरीर के त्यागने के पश्चात क्या होगा और किस विचार से नर शरीर दुर्लभ है। जहाँ तक मेरा अनुभव है मैं तो यह समझता हूँ कि इस नर शरीर में मानवीय जीवन एक महान आनन्द और मस्ती को पा सक्ता है। मुझे वह आनन्द, मस्ती और प्रसन्नता मिली इसलिये, मानवीय जीवन क्या पता समस्त अन्य जीव जन्तुओं से श्रेष्ठ माना हो।

किन्तु यह आनन्द, मस्ती, अचिन्त पना, निर्वैर पना, अभय पन किस प्रकार मिला ? औरों को किस प्रकार मिला होगा मुझे ज्ञात नहीं परन्तु मुझे मिला।

केवल:—

अपने राम को अपने ही घट खोजन से।
अपने ही आप में राम लगन से ..

जिनकी यह लगन सच्ची होती है उनको यह मस्ती। प्रसन्नता और आनन्द अवश्य मिलना चाहिये। क्योंकि मुझे मिला दाता-दयाल का एक शब्द है।

तेरी गुदड़ी में लाल टका, क्यों नहीं नज़र करे।
बग़ल में लड़का शहर ढिंढोरा, मूरख भरम मरे॥ क्यों
हिरन की नाभि रहे कस्तूरी, बन बन भटक मरे?
मानुष तन में साहब रहता, नर पाखान फिरे॥
बिन सतगुरु सब धोखा खाया, कैसे कोई उभरे।
राधास्वामी गुरू जब जीव चितावें, तब भव निधि तरे॥

यह भव निधि क्या है? मानवीय जीवन है। हमारे शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बोध भान भव निधि हैं। यही भव सागर है। बनाने वाले ने बना दिया और हम को उत्पन्न करके दुख सुख के खेल में फँसा दिया। गुरू मिले जिन्होंने इस खेल को आनन्द, प्रसन्नता में परिवर्तन कर दिया।

बस!

राम क्या है? प्रसन्नता है, मस्ती है, आनन्द है। इस बात का ज्ञान तथा समझ का आजाना और उस पर आरूढ़ होना अपने अन्तर उस मस्ती आनन्द का रूप हो जाना राम की प्राप्ती तथा राम का मिलना समझ में आया है। इसलिये जहाँ राम का रूप आनन्द, मस्ती और प्रसन्नता निकली वहाँ गुरू का रूप समझ, ज्ञान, विवेक और विचार है। यह ज्ञान, अनुभव, विवेक, विचार सदैव किसी वाह्य पूर्ण पुरुष के सत संग से प्राप्त होगा। बिन सत संग विवेक न होई।

आनन्द भयो बड़भाग्यो सतगुरु में पायो।

यह परिणाम राम के मिलने का सच्ची तड़प का हुआ।
मिलने वाले ने मिलाया, मिल गये हम मिल गये।

वासिले हक़ होगये, और दाग़ सारे धुल गये ॥

नोट—एक कवि साहब के बहुत कहने पर नीचे की चार लाइन के उत्तर में भेजता था यह चार लाइन उनकी नीचे यह उन कवि की हैं। यह उत्तर है।

जो क़िसमत हाथ में होती, तो सर मैदान हो जाते।
मराहिल जिस क़दर मुशकिल थे, सब आसान हो जाते ॥
बिगड़ती का बना लेना जो अपने हाथ में होता।
तो पूजा किसकी करते, खुद न हम भगवान हो जाते ॥
लगन सच्ची लगी होती, तो सब सामान हो जाते।
मिला होता अगर मुर्शिद, तो कुछ मुशकिल न था खुशदिल।
जो पूजा दिल से करते, बस में खुद भगवान हो जाते ॥

दयाल नन्दू भाई जी महाराज की साखी

ब्रह्म विषय के जो परे, परब्रह्म सो होय।
एक सबल यक शुद्ध है, विरला समझे कोय ॥
झांई मत का इष्ट यह, झाँई में नहीं सार।
परब्रह्म को जानले, वह है मूल वाकार ॥
छाँई छाँई एक सी, लख नहीं आवे बात।
यह माया का रूप है, गुप्त प्रगट दरसात ॥
बिन कर बहु करनी करे, बिन पग चाले चाल।
बिन जिभ्या वाणी कहे, अदभुत सरिस रसाल ॥
सतगुरु के प्रताप से, दोनों लीन्हा चीन्ह।
लख असार तिनको तजा चित्त न अपना दीन्ह ॥
असत् ब्रह्म परब्रह्म दोऊ, कह कबीर समझाय।
'नन्दू' गुरुमत परखकर सत्त नाम लो लाय ॥

शब्द स्वामी जी महाराज

त्याग चल सजनी जग की धार । बहै मत यामें दुख अपार ।।
सुरत से होजा सतगुरु लार । शब्द में तन मन दोनों गार ।।
लगी रहो आठों पहर सम्हार । अमीरस पीती रहो हुशियार ।
लगन का पकड़े रहो तू द्वार । नाद संग करले अब के प्यार ।।
कहैं राधास्वामी हेलामार । सोचकर चढ़ना त्रिकुटी द्वार ।।

ग़ज़ल पीरे मुग़ां साहब

सूरज को देखा उसके तू नूरोज़िया को देख ।
बशगुफ़्ता गुल को देखा था बादे सबा को देख ।।
इन्सां की आदमीयत पर हो तेरी निगाह ।
इल्मो अदब को देख के शर्मो हया को देख ।।
आये फ़क़ीर कोई नज़र में अगर तेरे ।
जुहद और तक़वा देख के सबरो रज़ा को देख ।।
कोई अमीर अगर है तो देख उसकी शान को ।
चाहो मनाज़लत को वजूदो अता को देख ।।
सब में खुदा खुदा ही है हर शै में है खुदा ।
शैतां भी पास आये तो उसमें खुदा को देख ।।

बड़ों का विनोद

(१) हाई कोर्ट में लोकमान्य तिलक पर एक मुक़द्दमा चल रहा था। उपस्थित होने के लिए आवाज़ लग चुकी थी किन्तु बैरिस्टर के आने में कुछ देरी हो रही थी। लोकमान्य बड़ी बेचैनी से बैरिस्टर की प्रतीक्षा कर रहे थे।

What our thought power can do or undo

Some school boys, who had failed to obtaina holiday, thought of a plan for getting the school master out of the way. 'If we could only get him to think he is ill,' said the eldest of them, 'he would be ill'--which was perfectly true. So they arranged that, as they entered the school the next day, each one should say to the master: good morning, Sir ! I am sorry to see you looking so ill.'

But when others made the same remarks, after a while he shut his book and said he would return home. So the boys got the wanted holiday. The next morning they were surprised to learn that the School master lay on his bed in a high fever. So the boys went to the School master and one by one said, 'good morning, Sir ! You are looking so well today.' Am I ? Said the Schoolmaster. I was feeling very ill. Then the Schoolmaster got up and in a few hours he had quite recovered his health.

Referring to the role of science in human affairs, Mr Nehru said he was struck by a phrase used by Acharya Vinoba Bhave in a message sent on the occasion of the inauguration of a women's college. Acharya Vinoba had said in the message: "The days of politics and religion are over and the days of science and spirituality have come." This, Mr Nehru said, came from a man whom he considered the most religious man in India. The Acharya had distinguished between spirituality and religion and he gave the first place to science. A deep thinker like Acharya Vinoba who was instinctively not attracted

दो नवयुवक बैरिस्टरों ने इसे देखा तो वह दौड़कर लोकमान्य के पास पहुँचे।

आपके बैरिस्टर को आने में देरी हुई है तो कोई बात नहीं हम लोग आपकी मदद के लिए तैयार हैं उन्होंने कहा।

'यह तो ठीक है भाई! लोक मान्य ने हँसते हुये कहा किन्तु सोलह वर्ष की बालिका के लिये बीस बाईस वर्ष के युवक की आवश्यकता पड़ती है, दस दस वर्ष के दो बालकों से वहां काम चल सकता है क्या?

हाई कोर्ट का भवन हँसी से गूंज उठा।

एक सज्जन गांधी जी से मिलने आये। उन्हें अपनी लेखन शैली पर बड़ा अभिमान था। उन्होंने गाँधी जी से भी अपने लेखों की बड़ी प्रशंसा की।

'मेरे योग्य कोई सेवा? चलते समय उन्होंने गांधी जी से पूछा। वह चाहते थे कि गाँधी जी उनसे हरिजन के लिये कोई लेख देने के लिये कहें।

'बड़ी प्रसन्नता की बात है। समय है आप पर?' गांधी जी ने पूछा।

'हाँ, हाँ, क्यों नहीं, आज्ञा कीजिये।' उन्होंने कहा।

'तो आइये मेरे साथ, आश्रम में बहुत सा गेहूँ बिना पिसा रक्खा हुआ है, उसे पीसने में मेरी सहायता कीजिये।' गांधी जी ने कहा।

आगुन्तक महोदय गांधी जी के मुँह की ओर ताकते ही रह गए।